Department of Philosophy
D. B. COLLEGE, JAYNAGAR, MADHUBANI (BIHAR)
(A Constituent unit of L. N. Mithila University K. Nagar, Darbhanga)
By:- Dr. Kumar Sonu Shankar
Assistant Professor (Guest)

May 23, 2020
kumar999sonu@gmail.com
8210837290,
8271817619

Class :- B.A. Part 1 (H & Subsi.)

Topic :- सांख्य दर्शन में परमसत् पुरूष की अवधारणा

सांख्य दर्शन भारतवर्ष की आस्तिक विचारधारा में सबसे प्राचीन दर्शन है। महाभारत, रामायण, श्रुति, स्मृति और पुराणों में सांख्य दर्शन का उल्लेख मिलता है। भगवद्गीता में सांख्य और योग दर्शन के सिद्धान्तों का उल्लेख मिलता है। छान्दोग्य, प्रश्न, कठ और श्वेताश्वतर उपनिषद में सांख्य दर्शन का विवरण उपलब्ध है। पालि ग्रन्थ के अध्ययन से ज्ञात होता है कि गौतम बुद्ध के समकालीन सांख्याचार्य आचार्य कलाम से भी दीक्षा लिया था। अद्वैत वेदान्त के आचार्य महर्षि वादरायण और आचार्य शंकर ने सांख्य दर्शन को प्रधानमल्ल स्वीकार किया। इस प्रकार उपरोक्त विवेचन से हमें सांख्य दर्शन की प्राचीनता की जानकारी मिलती है।

सांख्य दर्शन भारतीय दर्शन की प्रथम विचारधारा है जो एक मूलभूत कारण से सम्पूर्ण संसार का विकास प्रस्तुत करती है। इस द्वितत्ववादी विचाराधारा में पुरूष सिद्धान्त का आध्यात्मिक एवं महत्वपूर्ण स्थान है, क्योकि सांख्य दर्शन की मान्यता है कि पुरूष के कैवल्यार्थ ही प्रकृति से सम्पूर्ण सृष्टि का विकास होता है। सांख्य दर्शन में पुरूष को ही परमसत् माना गया है।

सांख्य दर्शन पुरूष के विषय पर तीन प्रश्नों पर विचार करता है–

1. पुरूष का क्या स्वरूप है?
2. पुरूष के अस्तित्व के लिए क्या प्रमाण है?
3. पुरूष एक है या अनेक?

सांख्य दर्शन में पुरूष का स्वरूप प्रकृति के सर्वथा विपर्यासात् माना गया है। चूँकि यह प्रकृति को त्रिगुणात्मिका, अविवेकी, विषय, श्रेय, अविविक्त, सामान्य, अचेतन प्रसवधर्मी या परिणामी मानता है। अतः प्रकृति के विरूद्धधर्मी होने के कारण पुरूष त्रिगुणातीत विवेकी, विषयी, ज्ञाता, विविक्त, चेतन और अपरिणामी है।

सांख्य दर्शन का पुरूष चैतन्यस्वरूप है, इस कारण वह शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि से भिन्न है। पुरूष कोई द्रव्य भी नही जिसका लक्षण चेतना है। यह चैतन्यस्वरूप है, चैतन्य उसका स्वभाव है। वह साक्षी है, निष्क्रिय है। उदासीन है, कूटस्थ नित्य एवं अपरिवर्तनशील है। वह कूटस्थ नित्य होने के कारण, कारण–कर्म श्रृंखला से परे है। वह न तो किसी का कारण है, न तो किसी का कार्य है। वह नित्य मुक्त, उदासीन, द्रष्टा एवं अकर्त्ता है। वह अज, नित्य, सर्वव्यापी, अनाश्रित, अलिंग, निरवयव एवं स्वतन्त्र है। पुरूष प्रकृति के विकारों का मात्र द्रष्टा है कर्त्ता नहीं। इसी कारण वह मात्र साक्षी है। सांख्य दर्शन की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वह पुरूष को अकर्त्ता मानते हुए भी भोक्ता मानता है। उसके अनुसार जिस प्रकार राजा स्वयं अन्न का उत्पादन करता फिर भी दूसरों द्वारा उत्पन्न किये गये अन्न का उपभोग करता है उसी प्रकार पुरूष अकर्त्ता होकर भी प्रकृति एवं उसके विकारों का भोक्ता है।

सांख्य दर्शन का पुरूष अर्थात् परमसत् अन्यान्य भारतीय विचारधाराओं के आत्मतत्त्व से भिन्न है। भारतीय दर्शन का भौतिकवादी सम्प्रदाय स्थूल शरीर को ही आत्मा कहता है। उसकी दृष्टि में चैतन्य से विशिष्ट शरीर ही आत्मा है।

न्याय–वैशेषिक दर्शन एवं मीमांसा दर्शन का प्रभाकर सम्प्रदाय आत्मा को अचेतन द्रव्य मानता है। मीमांसा में आत्मा को एक चेतन द्रव्य माना जाता है। जो अंशतः अज्ञान के आवरण से ढका रहता है।[2] जैन दर्शन के अनुसार आत्मा एक द्रव्य है एवं चेतना उसका नित्य धर्म (गुण) है। जन्ममरण जीवस्वरूप का गुण नहीं बल्कि मनुष्यादि विशेषों योनियों का गुण है। इस प्रकार जैन दर्शन की दृष्टि में आत्मा एवं चेतना में द्रव्य गुण संबंध है।[3] बौद्ध दर्शन क्षणिक चेतना के प्रवाह को आत्मा कहता है। अद्वैतवेदान्त दर्शन आत्मा को सच्चिदानंद रूप स्वीकार करता है।

किन्तु सांख्यकारिका का अनुशीलन करने से ज्ञात होता है कि सांख्य दर्शन का पुरूष अर्थात् परमसत् आत्मा संबंधी उपरोक्त सभी सिद्धांतो से भिन्न है। सांख्य दर्शन का परमसत् शरीर, इन्द्रिय, मन एव ं बुद्धि से भिन्न है क्योकि ये जड़तत्व प्रकृति का विकार होने के कारण जड़ एवं अनात्म है और पुरूष प्रकृति एवं उसके

विकारों से भिन्न है।[4] पुरूष चैतन्यस्वरूप है अतः वह न्याय वैशेषिक एवं प्रभाकर मीमांसा के अचेतन आत्मतत्व से भिन्न है।

सांख्य दर्शन पुरूष के स्वरूप के साथ उसके अस्तित्व हेतु तर्क दिये गये है। सांख्य दर्शन युक्तियो ं के आधार पर पुरूष के अस्तित्व को प्रमाणित करने का प्रयास करता है। ईश्वर कृष्ण की सांख्यकारिका में पुरूष के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए निम्नलिखित युक्तियां प्राप्त होती है–

संघातपरार्थत्वात् त्रिगुणादिविपर्यादधिष्ठानात्।।
पुरूषोऽस्ति भोक्तृभावात् कैवल्यार्थप्रवृत्तेश्च।।[11]

1. **संघातपरार्थत्वात्** – प्रकृति से उत्पन्न सभी महदादि तत्व संघात (सावयव) है। सांख्य दर्शन में सपंर्णू भौतिक जगत के अतिरिक्त इन्द्रिय, मन, बुद्धि और अहंकार तथा पंचमहाभूतों से निर्मित स्थूल शरीर को ही संघात पदार्थ माना जाता है। ये सभी पदार्थ परार्थ है दूसरों का स्वार्थ सिद्ध करते है। ये अपना प्रयोजन नही सिद्ध करते। यह दूसरा तत्व (पर तत्व) जिसका ये साध्य सिद्ध करते है। जड़ या अचेतन तत्व नहीं हो सकता क्योकि अचेतन तत्व का कोई साध्य सघंात नही होता। सहंत अर्थात् सघं ात रूप में विद्यमान समस्त अचेतन तत्व परार्थ देखा जाता है, उसकी समस्त प्रवृत्ति पर के लिए होती है। इससे विलक्षण वह 'पर' है उसका भोक्ता जीवात्मा। यदि भोक्ता आत्मा का अस्तित्व न माना जाय तो जगत की प्रवृत्ति निष्फल है। इस प्रकार भोग्य अचेतन से विलक्षण भोक्ता चेतन आत्मा का अस्तित्व सिद्ध होता है। इस प्रकार सांख्य दर्शन चेतन आत्मा को पुरूष कहता है। इस प्रकार सांख्य दर्शन में सांसारिक पदार्थों के संघातत्व से चेतन पुरूष का अस्तित्व सिद्ध होता है।
2. **त्रिगुणादिविपर्यात** – यह युक्ति प्रथम युक्ति को ही स्पष्ट करती है। इस युक्ति का आशय है कि संघात पदार्थों से जिस परतत्व का साध्य सिद्ध होता है वह स्वयं संघात पदार्थ नहीं हो सकता। यदि यह स्वीकार किया जाय कि वह परतत्व भी संघात है तो उस द्वितीय संघात के परार्थत्व से तृतीय संघात का प्रसंग उपस्थित होगा। इस प्रकार इस प्रक्रिया के अनन्त

तक जाने से अनावस्था दोष उत्पन्न होगा। अतः वह परतत्व जिसका साध्य ये संघात पदार्थ साधते है असंघात एवं निरवयव है। पुनः अव्यक्त प्रकृति एवं उससे उत्पन्न सभी संघात पदार्थ त्रिगुणात्मक है। अतः वह परतत्व जिसका साध्य इन त्रिगुणात्मक सघं ातो ं से सिद्ध होता है त्रिगुणातीत होना चाहिए। सांख्य दर्शन मे ं यह त्रिगुणातीत चेतन पुरूष है।

3. **अधिष्ठानात्** – सांख्य दर्शन के अनुसार विश्व के सभी भौतिक पदार्थ अचेतन है। अचेतन पदार्थों से कोई क्रिया तभी सम्पन्न हो सकती है जब कोई चेतन तत्व उसका नियमन अथवा नियन्त्रण करे। जैसे सारथि चेतन तत्व से ही अधिष्ठित होने पर रथ चलता है वैसे जड़ प्रकृति एवं उसके विकास चेतन तत्व से नियमित एवं नियन्त्रित होने पर ही सृष्टि रचना कर सकते है अथवा शरीर चेतन तत्व से अधिष्ठित होने पर ही कोई क्रिया कर सकती है। इस प्रकार प्रकृति एवं उसके विकार के अधिष्ठाता की दृष्टि से पुरूष की सत्ता सिद्ध होती है। जितना त्रिगुणात्मक अचेतन जगत है, उसका कोई अन्य चेतन अधिष्ठाता रहता है जो अचेतन में प्रवृत्ति आदि का हेतु होता है। जिस प्रकार रथ आदि अचेतन की प्रवृत्ति का हेतु एक नियन्ता अधिष्ठाता रहता है, इसी प्रकार बुद्धि से लेकर स्थूलभूतनिर्मित शरीर तक जितना यह संघात है, इसमें प्रवृत्ति का हेतु कोई चेतन अधिष्ठाता होना चाहिए, वह जीवात्मा है। जैसे इस शरीर का अधिष्ठाता एक चेतन है ऐसे ही अखिल अचेतन प्रकृति का एक चेतन अधिष्ठाता होना चाहिए क्योंकि शरीर का अधिष्ठाता आत्मा अल्पज्ञ व अल्पशक्ति होने के कारण अखिल प्रकृति का अधिष्ठाता नही हो सकता। फिर आत्मा अनन्त होने के कारण यह व्यवस्था करनी अशक्य है कि इनमें से कौन सी आत्मा प्रकृति का अधिष्ठाता हो? इसलिए समस्त विश्व का अधिष्ठाता परमात्मा है। इस प्रकार जीवात्मा और परमात्मा चेतनमात्र का अस्तित्व इन हेतुओं से सिद्ध होता है।

4. **भोक्तृभावात्** – सांख्य दर्शन भोक्तृभावत्व से भोक्ता पुरूष के अस्तित्व को सिद्ध करता है। प्रकृति एवं उसके समस्त विकार भोग्य है। अतः इनका कोई भोक्ता भी होना चाहिए जिस प्रकार भोजन को देखकर उसके किसी भोक्ता

का अस्तित्व सिद्ध होता है, उसी प्रकार प्रकृति एव ं उसके सभी विकारो ं का कोई भोक्ता अवश्य होना चाहिए। पुनः संसार की वस्तुएं त्रिगुणात्मक होने के कारण सुख, दुःख, उदासीनता की अनुभूति कराती है। अतः इन अनुभूतियों के अनुभवकर्त्ता या भोक्ता के रूप मे ं पुरूष का अस्तित्व सिद्ध होता है क्योि ंक भोक्ता के अभाव मे ं भोग्य पदार्थों की कोई सार्थकता नही होती है। इस प्रकार समस्त अचेतन त्रिगुणात्मक जगत भोग्य है, इसकी उपयुक्तता व सफलता उसी समय है जब इसका कोई भोक्ता हो। अचेतन भोग्य जगत का कोई चेतन भोक्ता स्वीकार करना आवश्यक है। स्वयं भोग्य भोक्ता नही हो सकता, इसलिए अचेतन प्रकृति के अतिरिक्त चेतन आत्मा को सांख्य मे ं भोक्ता स्वीकार किया गया है। इस प्रकार प्रकृति का भोक्ता होने के कारण पुरूष की अवधारणा सिद्ध होती है।

5. **कैवल्यार्थप्रवृत्ते** – यह युक्ति इस बात पर बल देती है कि पुरूष, मन, बुद्धि, अहंकार, इन्द्रिय एवं देह से भिन्न है। सांख्य दर्शन के अनुसार संसार में कैवल्य के लिए प्रवृत्ति दिखाई देती है। कैवल्य मोक्ष है जिसमें त्रिविध दुःखों की अत्यान्तिक निवृत्ति होती है। संसार में कुछ व्यक्ति कैवल्य हेतु प्रयासरत दिखाई देते है। वे तपश्चर्या, साधना आदि में रत रहते है। इस पद्धति में वे अपने शरीर को कष्ट देते है। वे इन्द्रियों, मन, बुद्धि आदि को भी नियन्त्रित करने का दुष्कर कार्य करते हुए देखे जाते है। अतः स्पष्ट है कि वह तत्व, जिसके कैवल्य हेतु प्रयासरत देखे जाते है शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि से भिन्न है। सांख्य दर्शन इस चेतन आत्मतत्व को पुरूष कहता है। इस प्रकार कैवल्यार्थ प्रवृत्ति से पुरूष की सत्ता प्रमाणित होती है। कैवल्य को ही सांख्य दर्शन में अत्यन्त पुरूषार्थ कहा है, प्रत्येक आत्मा दुःखो ं स े बचना चाहता है। दुःख आदि द्वन्द प्रकृति के साथ संपर्क होने पर प्राप्त होते है। इस स्थिति से बच जाना कैवल्य है अर्थात् प्रकृति के साक्षात् सम्पर्क से रहित केवल आत्मा की स्थिति। चेतन आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करने पर ही प्रकृति के साथ उसके सम्पर्क की कल्पना की जा सकती है। इस प्रकार जिसके कैवल्य के लिए प्रकृति की प्रवृत्ति है ऐसे चेतन के अस्तित्व

को स्वीकार किया जाना आवश्यक है। अथवा दूसरे रूपों में दुःखों से बचने के लिए जो प्रवृत्त होता है अवश्य दुःखात्मक प्रकृति से अतिरिक्त उसका अस्तित्व होगा, वही चेतन आत्मा है। इन सब आधारों पर त्रिगुणात्मक अचेतन प्रकृति से भिन्न चेतन तत्व का अस्तित्व सिद्ध होता है।

पुरूष अनेक है –

सांख्य दर्शन पुरूष की अनेकता का सिद्धांत प्रतिपादित करता है। सांख्य दर्शन पुरूष को अनेक मानता है। वह अद्वैत वेदान्त की इस मान्यता को अस्वीकार करता है कि एक ही आत्मा सभी जीवों में व्याप्त है। सांख्य दर्शन का यह विचार जैन, मीमांसा एवं रामानुज के विशिष्टाद्वैत से मेल खाता है क्योंकि इन विचारधाराओं में भी अनेक जीवो ं के अस्तित्व में विश्वास किया जाता है। सांख्यकारिका में पुरूष की अनेकता का प्रतिपादन करने के लिए निम्नलिखित कारिका प्राप्त होती है–

''जन्म–मरण–करणानां प्रतिनियमादयुग्पत्यप्रवृतेश्च।
पुरूष बहुत्वं सिद्धं त्रैगुण्यविपर्याच्चैव।।''[12]

1. **जन्ममरणकरणानां प्रतिनियमात् :–** सांख्य दर्शन के अनुसार संसार में प्रत्येक पुरूष का जन्म, मरण और करण प्रतिनियत है। विभिन्न पुरूषों के जन्म और मृत्यु में अन्तर दिखाई देता हैं विभिन्न पुरूषों की इन्द्रियो ं में भेद प्रतीत होता है। एक पुरूष के जन्म लेने से सभी पुरूषो ं का जन्म नहीं हो जाता है। एक पुरूष के मृत्यु से सभी पुरूषो ं की मृत्यु नही हो जाती है। इसी प्रकार एक पुरूष के अन्धा या बहरा होने से सभी पुरूषों के अंधा या बहरा होने का प्रसंग उपस्थित नही होता। यदि पुरूष एक होता तो एक पुरूष के जन्म से सभी पुरूषों का जन्म हो जाता, एक पुरूष के मृत्यु से सभी पुरूषों की मृत्यु हो जाती। इसी प्रकार एक पुरूष की इन्द्रियों में सभी पुरूषों की इन्द्रियों का समावेश हो जाता। लेकिन संसार में ऐसा नहीं दिखाई देता इसलिए यह सिद्ध है कि पुरूष एक नहीं अनेक है। (जन्ममरणकरणानां प्रतिनियमात्)।

2. **अयुग्पत्प्रवृत्तेः** :– सांख्य दर्शन के अनुसार संसार में युगपत प्रवृत्ति नही दिखाई देती है। विश्व में प्रत्येक व्यक्ति के क्रियाकलापो ं में विभिन्नता दिखाई देती है। हम देखते है कि जब एक व्यक्ति सोता है, तब दूसरा व्यक्ति कार्य करता रहता है। एक व्यक्ति हंसता है तो दूसरा व्यक्ति रोता हुआ दिखाई देता। इसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न–भिन्न कर्म प्रवृत्ति परिलक्षित होती है। यदि सभी जीवों में एक ही पुरूष होता तो एक व्यक्ति द्वारा कोई कार्य करने पर सभी लोग उसी कर्म में रत दिखाई देते है। किन्तु ऐसा नही होता। इससे यह प्रमाणित होता है कि पुरूष एक नही अनेक है। (अयुग्पत्प्रवृत्तेः)।

3. **त्रैगुण्यविपर्यात्** :– संसार में सभी जीवों में विभिन्न स्तर दिखाई देते है और उनमें गुण की दृष्टि से भेद प्रतीत होता है। देवताओ ं का स्तर सभी जीवो ं में सर्वोच्च है। इसके बाद मानव जाति का स्तर है। अन्त में पशु–पक्षियों तथा अन्य जीवो ं मे ं सत्व, रजस एवं तमस तीनो ं गुण पाये जाते है तथापि प्रत्येक जीवो ं में तीनो ं गुणो ं मे ं विभिन्नता दिखाई देती है। देवताओं मे ं सत्वगुण की अधिकता होती है, मनुष्यो ं मे ं रजोगे ुण तथा अन्य जीवो ं में तमोगुण की बहुलता पायी जाती है। मानव योनि के विभिन्न जीवों में भी तीनों गुणों का भेद दृष्टिगोचर होता है। किसी में सत्व गुण की प्रधानता है तो अन्य मनुष्यों में रजस अथवा तमस की। यदि सभी जीवों में एक ही पुरूष व्याप्त होता तो उनकी एक ही कोटि होती और उनमें गुणो ं की दृष्टि से कोई भेद न होता। इससे यह सिद्ध है कि पुरूष एक नही वह अनेक है। (त्रैगुण्यविपर्यात्)

इस प्रकार सांख्य दर्शन **पुरूष की अनेकता** को प्रमाणित करता है।

Dr. Kumar Sonu Shankar
Assistant Professor (Guest)
Department of Philosophy
D. B. College jainagar
Mobile 8210837290
Whatsapp 8271817619
E-mail Id: kumar999sonu@gmail.com